बच्चे और चित्र किताबें

❑ रविकान्त

छोटे बच्चों को कहानियां सुनना तो बेहद पसंद होता है यह बात हम सभी अपने अनुभवों से जानते हैं। कहानी सुनने में रुचि बच्चों के भाषायी विकास में मदद तो पहुंचाती ही है आनंद, रोमांच, कौतुहल भी पैदा करती है। कहानी सुनते हुए चेहरे के बदलते भाव बच्चे को उन भावों में गोता लगवाते हैं। साथ-साथ वह कल्पना करने, विचार करने, अनुमान लगाने, व्याख्या करने, कारण ढूंढ़ने, कार्य कारण संबंधों को समझने, अपने से अलग समाजों को समझने, खुद को औरों से जोड़ कर देख पाने, जुदा-जुदा हालातों में जूझना और उनमें जीने के तरीकों को समझ पाने में भी काफी मददगार होती हैं।

इसलिए लगातार यह कोशिश की जाती रही है कि मौखिक भाषा से लिखित भाषा पर जाने के लिए ऐसे रास्ते चुने जाएं जिससे बच्चे आसानी से अपनी मौजूदा भाषाई क्षमताओं का उपयोग करते हुए लिखित भाषा पर सहजता से अपनी पकड़ बना पाएं। चित्र कहानियों की किताबें उन कई रास्तों में से एक महत्त्वपूर्ण रास्ता है।

बच्चों के लिए जगत के अनुभवों को हासिल करने के लिए इंद्रियों द्वारा सीधे हासिल किए गए अनुभवों की कोई सानी नहीं है लेकिन हम यह भी जानते हैं कि इंसानी ज्ञान की विरासत का हकदार बनने के लिए बच्चों को इसी के साथ-साथ भाषा भी सीखनी होती है और उसे लिखना-पढ़ना भी सीखना होता है ताकि वह अनुभवों से तो ज्ञान हासिल करे ही लेकिन उसके साथ-साथ कई चीजों के बारे में अन्य व्यक्तियों के अनुभवों को पढ़कर भी सीख सके और अपने अनुभवों को लिखकर औरों के साथ बांट सके। और इसके साथ ही इंसानी प्रजाति द्वारा एक लंबे कालखंड में हासिल किए गए ज्ञान को हासिल करके उसे और आगे बढ़ाने में मददगार हो सके।

मौखिक भाषा सीखते समय बच्चे के आसपास मौखिक भाषा का माहौल उपलब्ध होता है और उसे सिखाने के लिए उसी भाषायी समाज के बहुत से व्यक्ति भी मौजूद होते हैं। इसके साथ ही मौखिक भाषा सीखने में सार्थकता और आवाजों के साथ खिलवाड़ हमेशा मौजूद रहता है। सिखाने वाले व्यक्ति और बच्चा दोनों ही इसका भरपूर उपयोग करते हैं। लिखित भाषा सीखने में बच्चों के लगातार कोडीकरण या डीकोडीकरण दोनों ही प्रक्रियाओं के दो-दो चरणों से गुजरना होता है। कोडीकरण में पहले अनुभवों या वस्तुओं को मौखिक नामों या वाक्यों में बदलना और फिर उन नामों और वाक्यों को लिखित प्रतीकों में बदलना होता है और डिकोडीकरण में इसका उल्टा होता है। यह सिर्फ एक से दूसरे चरण में जाने का मामला ही नहीं होता बल्कि इसमें मौखिक भाषायी प्रतीकों को मूल इकाइयों में तोड़ कर, उसे लिखित प्रतीकों की मूल इकाइयों से जोड़ कर, सार्थक ढंग से काम लेना सीखना होता है जो कि अपने आप में काफी जटिल काम है। ऐसी हालत में चित्र मौखिक भाषायी प्रतीकों और निरर्थक से लगने वाले लिखित प्रतीकों के बीच एक सार्थक-सी कड़ी बनाने का काम भी करते हैं।

हम यह भी जानते हैं कि 5 साल की उम्र तक के बच्चे ज्यादातर आत्मकेन्द्रित होते हैं। इस उम्र में उनके ज्यादातर विचार खुद के इर्द-गिर्द ही घूमते रहते हैं। उनका लगाव अपनी चीजों से ज्यादा होता है और भौतिक चीजों, चाहे वे वस्तुएं हों या किताबें,

के साथ आसानी से अपना रिश्ता जोड़ पाते हैं। यहां तक कि वे अपनी मनपसंद किताब के साथ खाना खाते हैं, उसे साथ लेकर सोते हैं और यदि उनका बस चले तो उसे साथ लेकर नहाना चाहते हैं। ये बच्चे छोटी-छोटी घटनाओं को पढ़ना या सुनना पसंद करते हैं। इस उम्र में बच्चे निरर्थक गीतों या कहानियों में खूब मजा लेते हैं। इसके साथ ही ऊटपटांग आवाजों को बोलने में भी मजा लेते हैं।

6 से 8 की उम्र में बच्चा अपने से थोड़ा आगे बढ़ कर अपने आसपास की चीजों में रुचि लेने लगता है और उसके दिमाग में कई तरह के सवाल भी पैदा होते हैं। जिन्हें वह अपने आसपास के लोगों और किताबों से जानने की कोशिश करता है। वह अपने विचारों को बनाना और उनकी जांच भी करवाना चाहता है और इस उम्र में अच्छी किताबें उसके लिए नयी दुनिया का दरवाजा खोल सकती हैं।

इस संदर्भ में यदि चित्र कहानी की किताबों की बात की जाए तो यह कहा जा सकता है कि सरलता वह चीज है जो बच्चों की किताबों में होनी चाहिए। चाहे सरल वाक्यों में लिखी गई भाषा हो या बड़े और साफ-साफ से चित्र हों। छोटे-छोटे वाक्य को समझने में बच्चों को आसानी होती है। वाक्यों का छोटा होना इसलिए भी फायदेमंद है क्योंकि छोटे बच्चों के लिए चित्र कहानियां 200 से 300 शब्दों तक ही बेहतर रहती हैं। बड़े बच्चों के लिए लिखी गई चित्र कहानियों में शब्दों की संख्या अधिक भी हो सकती है।

यहां पर यह बात भी ध्यान में रखी जानी चाहिए कि किताबों में लिखी इबारत का आकार बच्चों के लिए उपयुक्त हो। कई चित्र किताबों में अक्षरों का आकार इतना छोटा होता है जिसे आसानी से पढ़ पाना छोटे बच्चों के लिए मुश्किल होता है। 'टिड्डे उड़ो आकाश में' इसी तरह की किताब है जो अच्छे चित्रों के बावजूद अक्षरों के आकार के कारण पढ़ने में मुश्किल पैदा करती है।

छोटे बच्चे आरंभ में पूरी किताब को देख कर या पढ़ कर समझ पाने में थोड़ी कठिनाई महसूस करते हैं। अत: यदि हर पन्ने पर ऐसी बात हो जिसमें छोटी-सी घटना भी हो और ऐसी छोटी-छोटी घटनाएं मिल कर पूरी कहानी बनाती हों तो उसे समझने में उन्हें आसानी होती है। छोटे बच्चे चित्रों को सिर्फ पहचान कर ही खुश हो जाते हैं । थोड़ा बड़े होने पर वे उन चित्रों में क्या हो रहा है यह ज्यादा बेहतर और बारीकी से समझ सकते हैं और पिछले पन्नों में होने वाली घटनाओं की अपने दिमाग में तस्वीर बना कर पूरे घटनाक्रम को समझ पाने में सक्षम हो पाते हैं।

कहानियों में कुछ नये शब्दों का उपयोग भी किया जा सकता है पर ऐसे शब्द कम से कम होने चाहिए। इसमें भी यह ध्यान रखा जा सकता है कि ऐसी किताबों में नए शब्दों का उपयोग किया जाए जिन्हें पढ़ने वाले बच्चे कम से कम कुछ चित्र किताबें ऐसी पढ़ चुके हों जिनमें नये शब्द न हों।

ऐसी कहानियां भी बच्चों को पसंद आती हैं जिनमें किसी एक ही बात को बार-बार दोहरा कर मजबूत किया जाता हो और हर बार दोहराते समय उसमें पात्र व काम या कोई चीज बदल जाती हो। ऐसी बातों में पुरानी बातों को दोहराने के साथ-साथ नई बातें

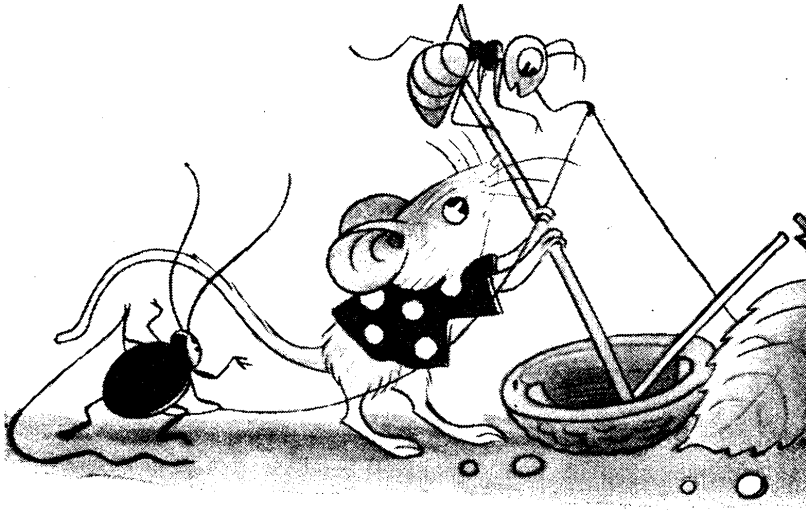

भी जोड़ दी जाती हैं। इस तरह की कई कहानियां हमारे पास मौजूद हैं। जैसे सी बी टी द्वारा प्रकाशित 'बुढ़िया की रोटी', गिजुभाई द्वारा संकलित 'टशुक भाई'। इन दोनों कहानियों में आरंभ में जो वाक्य लिए गए हैं उसी संरचना के वाक्य नये पात्र और नई घटनाओं को जोड़कर लगातार बनाए गए हैं। अत: बच्चे बड़ी आसानी से अगली घटना का अनुमान लगा पाते हैं और वाक्य संरचनाओं को आसानी से पढ़ भी पाते हैं।

एक सवाल जो हमेशा बच्चों के साहित्य के साथ उठता है वह यह कि क्या यह साहित्य सचेतन रूप से नैतिक शिक्षा दे ? यह तो ठीक है कि साहित्य में आमतौर पर कोई न कोई मूल्य तो होते हैं। यहां पर यह भी ध्यान देना जरूरी है कि जिन कहानियों को, जैसे पंचतंत्र या ईसपनीति आदि बाल साहित्य कहा जाता है, वे बच्चों के लिए न लिखी जाकर समाज में किन मूल्यों को काम में लिया

जाना जरूरी है, ध्यान में रखकर लिखी गई थीं। इसे समाज में कुछ मूल्यों को निरन्तरता को बनाए रखने की कोशिश के रूप में भी देखा जा सकता है ।

आज के वक्त में बच्चों को सीधे उपदेश देने वाली कहानियां आम तौर पर ठीक नहीं समझी जाती हैं। इसकी कई वजहों में से एक वजह संभवत: उपदेशात्मक कहानियों में समस्याओं को बहुत ही सतही तरीके से उठाना और पात्रों को अच्छे या बुरे रूप में ही दर्शाना है जबकि चीजों को सिर्फ इसी रूप में देखना सरलीकरण ही होगा। उपदेशात्मक कहानियों में मौजूद कुछ समस्याओं को इब्ने इंशा ने उर्दू की आखिरी किताब में उन कहानियों के पुनर्लेखन के जरिए बहुत ही सटीक तरीके से उठाया है। इसे ठीक मानें तो हमारे सामने एक ही रास्ता बचता है कि कहानियों में जिन मूल्यों की बात की जानी है उन्हें बहुत ही सरल तरीके से किसी घटना या पात्र के जरिए रखा जाए और उस घटना में वह मूल्य बहुत ही सहज ढंग से उभर कर आए। वी. सुतेयेव की कहानियां बहुत ही सरल ढंग से मूल्यों को घटनाओं के जरिए रखती हैं। जैसे 'नाव चली' वाली किताब बिना किसी शोर-शराबे के साथ मिलकर काम करने से मिलने वाले ऐसे नतीजे पर पहुंचती है जो संभवत: उस कहानी में किसी एक पात्र के बस का नहीं था। और इस बात का कोई उपदेश भी नहीं देती।

जानवरों के पात्रों के रूप में लेकर कई सारी किताबें लिखी गई हैं। कई में जानवरों को इंसानों के प्रतीक के रूप में दर्शाया जाता है। और उनके जरिए मानवीय समस्याओं को सुलझाने की कोशिश की जाती है। ऐसी कहानियों की भरमार हमें मिलती है जहां जानवरों के स्तर की समस्याएं उठायी जाती हैं और उन्हें हल करने की कोशिश की जाती है। और उन जानवर पात्रों में उसी जानवर के कुछ गुण बहुत ही साफ ढंग से उभर कर आते हैं। वी. सुतेयेव की कहानी 'मैं भी' को देखें तो उसमें मुर्गी के बच्चे के नकल करने के स्वाभाविक गुण को लेकर छोटी-सी घटना बुनी गई है। जिसमें हर काम में बतख के बच्चे की नकल करने वाला मुर्गी का बच्चा अपनी जान खतरे में डाल बैठता है। छोटे बच्चों में भी अपने साथ वालों या अपने से बड़ों की नकल करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। अत: इस प्रवृत्ति को साम्यता के चलते वह तुरन्त अपने को इस कहानी के साथ जोड़ लेता है। इसी तरह वे कहानियां ज्यादा सहज और स्वाभाविक नजर आती हैं जिसमें पात्र के रूप में जानवर अपने स्वाभाविक गुणों के साथ नजर आते हैं।

छोटे बच्चों को कुछ डर सताते हैं। इन डरों का कारण समझा पाना उनके लिए मुश्किल होता है। इसके कुछ कारण तो सामाजिक या सांस्कृतिक हो सकते हैं और कुछ जैविक भी। अत: उन्हें ऐसी कहानियां भी काफी पसंद आती हैं जिसका नायक किसी चीज से डरता हो और कहानी के आखिर में उस डर से छुटकारा पा लेता हो।

बहुत सारी अच्छी चित्र किताबें उन लोगों द्वारा बनाई गई हैं जो या तो चित्रकारों द्वारा लिखी गई हैं या फिर लेखक द्वारा ही अपनी किताब के चित्र बनाए गए हों। इसकी वजह शायद यह हो कि कहानी के दृश्यों की कल्पना कर पाना और उसे शब्दों में व्यक्त कर पाना इन दोनों के बीच तालमेल बिठाने की जरूरत होती है और यह तभी शायद सबसे अच्छे ढंग से हो पाता है जब एक ही व्यक्ति इन दोनों कामों में दखल रखता हो। क्योंकि वह शब्दों का कम से कम उपयोग करके बाकी चीजों को चित्रों के माध्यम से कह सकता है यानी वह कम शब्दों में कही गई घटना का विस्तार चित्रों में कर सकता है। इससे चित्र भी उस कहानी का अटूट हिस्सा बन जाते हैं।

आम तौर पर सिर्फ समाज के कुछ ही वर्गों का सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश चित्र किताबों में नजर आता है। अत: यह एक बड़ा सवाल है कि कैसे देश और दुनिया के विविध तरह के समाजों के सांस्कृतिक और सामाजिक परिवेश को शामिल किया जाए। जिसमें आदिवासी, जनजाति, गोरे-कालों, पिछड़े वर्गों के समाज तो शामिल हों ही, उन समाजों और दूसरे समाजों में मौजूद विभिन्नताओं को भी जगह मिले। ◆